चौबीस तीर्थंकर स्तुति

(रचयिता-आचार्यश्री विमर्शसागर जी महाराज)

किया कर्मयुग आदि में, धर्मतीर्थ अवतार।
आदिब्रह्म आदीश को, प्रणमूँ बारम्बार॥1॥

जीत लिया निज मन अहा!, अमित ज्ञान से आप।
अजितनाथ! को नित नमूँ, मिटे सकल संताप॥2॥

'शं' पाना सबकी नियति, है यह आतमज्ञान।
आत्मज्ञान का दान दो, हे शम्भव! भगवान्॥3॥

अभिनन्दन निजभाव का, करना नित्य विचार।
अभिनन्दन! वन्दन मेरा, कर लो अब स्वीकार॥4॥

जहाँ सुमति वहँ धर्म है, जहाँ कुमति वहँ पाप।
सुमतिनाथ! वन्दन करुँ, मिटे कुमति भव ताप॥5॥

छद्मज्ञान दुःखकार है, पूर्णज्ञान सुखकार।
पद्मप्रभ ! चरणों नमन, मिले मुक्ति का द्वार॥6॥

अनेकान्त श्रद्धान ही, आत्मज्ञान का मूल।
वन्दन प्रभु सुपार्श्व को, दिखलाई जिन भूल॥7॥

चन्द्रकांति जैसा धवल, यथाख्यात चारित्र।
हे चन्द्रप्रभ! दो हमें, रहूँ नहीं अपवित्र॥8॥

कामादिक को नाशकर, हुये आप निष्काम।
पुष्पदन्त चरणों अहा!, करता पुष्प प्रणाम॥9॥

प्रभु! निश्चय-व्यवहार से, बतलाया शिवपंथ।
चरणों शीतलनाथ के, झुकते गणधर संत॥10॥

रत्नत्रय ही श्रेय है, दिया धर्म उपदेश।
प्रभु श्रेयान्स की भक्ति से, मिट जाये भव क्लेश॥11॥

पाँच महाव्रत गुप्तित्रय, पाँच समितियाँ पाल।
तीन लोक से पूज्य प्रभु वासुपूज्य! पद भाल॥12॥

अमलस्वभावी आत्मा, प्रगट विमल पर्याय।
विमलनाथ! वर दो हमें, मम चेतन धुल जाए॥13॥

द्रव्य-भाव-नोकर्म का, किया आपने अन्त।
हे अनन्तप्रभु! आप सम, पौरुष पाउँ अनन्त॥14॥

धर्ममार्ग निज में नियत, कहता आतमधर्म।
धर्मनाथ की वन्दना, करो मिटे सब भर्म॥15॥

आत्मशांति जब तक नहीं, तब तक सदा अशांति।
शान्ति प्रभु सम शान्ति हो, करो जगत से क्रान्ति॥16॥

कुन्थु आदिक् जीव पर, धरो दया का भाव।
कुन्थुनाथ पद पूजकर, भव का करो अभाव॥17॥

इन्द्रिय सुख के दास हो, किया चतुर्गति वास।
बनो दास अरनाथ के, मिले मोक्ष निज पास।18॥

मोह मल्ल को जीतकर, आप हुए निर्मोह।
मल्लिनाथ पद रज नमूँ, करने मोह बिछोह॥19॥

बिन व्रत संयम नियम के, निश्चय व्रत नहिं जान।
दिव्यध्वनि में यह कहा, मुनिसुव्रत भगवान॥20॥

नय प्रमाण निक्षेप से, कहा तत्व का सार।
नमिनाथ द्वय पद नमूँ, पाने पद अविकार॥21॥

पुण्य-पाप दोनों कहे, स्वर्ण लोह जंजीर।
नेमिनाथ प्रभु! मेंट दो, मम भव-भव की पीर॥22॥

अशुभ छोड़ शुभ पा लिया, शुभ तज शुद्ध स्वभाव।
पार्श्वनाथ प्रभु दीजिये, आत्मधर्म की छाँव॥23॥

स्याद्वाद असि धार से, जीते कुमत अधीर।
सर्वश्रेष्ठ जिनधर्म है कहा नमूँ महावीर॥24॥

तीर्थंकर चौबीस का, हो "विमर्श" नित ध्यान।
ध्यान-ध्येय-ध्याता मिटे, मिले सहज भगवान॥